ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 56-**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-III, Issues-37, YEAR- July-Sept. 2025

गाँधी का ट्रस्टीशिप के सम्बन्ध में विचार

डॉ0 धन्नजय कुमार

असिस्टेंस प्रोफेसर – समाजशास्त्र विभाग, रघुवंश प्रसाद सिंह महाविद्यालय, हरनौत, नालांदा (बिहार) भारत

Received-28.07.2025, Revised-07.08.2025, Accepted-14.08.2025 **E-mail : dhananjay803110@gmail.com**

सारांशः ***अहिंसक–राज्य–पद्धति अर्थात् 'सर्वोदय' की धारणा के साथ समाज की नवीन आर्थिक–संरचना के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी का 'ट्रस्टीशिप सिद्धान्त' जिसे विनोबा ने स्वयं 'विश्वस्त वृत्ति' का नाम दिया है : का महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'ट्रस्टीशिप' सिद्धान्त विशेष रूप से मालकियत और आर्थिक वितरण के प्रश्न पर नैतिक और अहिंसक समाधान का एक प्रयास है।***

वर्तमान समाज की आर्थिक–व्यवस्था के सम्बन्ध में मुख्य रूप से दो विचार प्रचलित हैं : व्यक्तिवादी या पूँजीवादी विचार और समष्टिवादी या समाजवादी विचार। व्यक्तिवादी–पूँजीवादी विचार उत्पादन के व्यक्तिगत स्वामित्व का समर्थन करता है जिसमें व्यक्ति को अपनी क्षमता पर उपार्जन करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। ऐसी अर्थ–रचना का मुख्य आधार माँग और पूर्ति का नियम है। इस प्रकार की आर्थिक व्यवस्था का आवश्यक परिणाम प्रतिस्पर्धा, उपनिवेशवाद, अमीर और गरीब के बीच विषमता, शोषण और स्वार्थपरता है, परन्तु इसकी एक विशेषता यह है कि यह व्यक्ति को अपनी शक्ति पर उत्पादन करने को प्रेरित करता है।

कुंजीभूत शब्द– **अहिंसक–राज्य–पद्धति, सर्वोदय, नवीन आर्थिक–संरचना, ट्रस्टीशिप सिद्धान्त, विश्वस्त वृत्ति, उपनिवेशवाद।**

उत्पादन पर किसी प्रकार का अनावश्यक प्रतिबन्ध न लगाने से राष्ट्रीय आय की वृद्धि होती है। इस प्रकार की आर्थिक संरचना इंगलैंड, अमरीका आदि देशों में है। समष्टिवादी या समाजवादी विचार पूँजीवादी व्यवस्था का घोर विरोधी है। यह व्यक्तिगत स्वामित्व को ही शोषण का मूल कारण मानता है। यह उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व के बदले समूचे समाज का स्वामित्व स्थापित करना चाहता है। अतः उत्पादन और वित्तरण के कार्यों को राज्य के हाथों सौंपता है। ऐसी व्यवस्था में व्यक्ति की स्वाभाविक उत्पादन की प्रेरणा समाप्त हो जाती है तथा वह अपनी स्वतंत्रता खोकर यंत्रवत् जीवन व्यतीत करता है। आर्थिक विषमता को मिटाने के लिए इस हिंसा का भी सहारा लिया जाता है, जो समस्या का वास्तविक और उचित समाधान नहीं है, परन्तु इस प्रणाली की एक विशेषता है कि यह 'अर्थ' का वितरण व्यापक रूप से सम्पूर्ण समाज में करना चाहता है। इस विचार के समर्थक रूस और चीन आदि साम्यवादी देश माने जाते हैं। इन दोनों से भिन्न एक तीसरे प्रकार का भी दृष्टिकोण है जिसमें आर्थिक जीवन की तिरस्कृत कर परलोकमुखी जीवन व्यतीत करने की आकांक्षा है। वास्तव में यह पलायनवादी विचार है, जिसका आधार संन्यासवाद ही है। इस प्रकार के विचार में सरल और त्यागमय जीवन को ही उचित समझा जाता है तथा आर्थिक उत्पादन और प्रगति को ही उपेक्षित किया जाता है। इस प्रकार के विचार में सामाजिक और भौतिक वास्तविकता का ही तिरस्कार होता है, जो मानव–समाज के हित के विपरीत है।

'ट्रस्टीशिप' के सिद्धान्त में गाँधीजी ने उपर्युक्त तीनों सिद्धान्त (पूँजीवाद, समाजवाद और संन्यासवाद) की बुराइयों का परित्याग कर उनकी अच्छाइयों को ग्रहण किया है। पूँजीवादी व्यवस्था का व्यक्तिगत स्वामित्व और उसका अनिक्रम, समाजवादी–व्यवस्था का समाज–कल्याण और परलोकवादियों की अर्थ–विमुखता और त्यागमय जीवन–तीनों का एक साथ मिलन गाँधीजी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त में होता है। इस धारणा में गीता के अपरिग्रह और समत्व भावना[1] कानून के ट्रस्टीशिप[2] और इशावाक्य के 'तेन त्यकतेन मुंजीथाः'[3] का अपूर्व समन्वय हो जाता है। यहाँ व्यक्तिगत स्वामित्व समाज के पवित्र धरोहर के रूप में रहता है। अतः सामाजिक सम्पदा भोग के लिए नहीं, बल्कि जन–कल्याण के लिए मानी जाती है। इसलिए यहाँ मालिक और मजदूर के बीच वर्ग–संघर्ष नहीं, बल्कि एक नवीन सम्बन्ध की कल्पना की गयी है जिसमें दोनों के बीच हितैक्य का भाव रहता है। यह अमीरों और गरीबों के बीच विषमता को मिटाने का अहिंसक–समाजवाद है।[4] इसके द्वारा पूँजीपति को सुधार का एक सुअवसर[5] प्रदान किया जाता है, यह विश्वास रखकर कि मानव–स्वाभाव बदल सकता है। इसमें स्वार्थ और संग्रह के लिए उत्पादन का निषेध[6] और सामाजिक आवश्यकतानुकूल समाजहित के लिए उत्पादन का भाव है।[7]

गाँधी जी के अनुसार संसार की सभी वस्तुओं का वास्तविक मालिक ईश्वर है जिसने इसका सृजन किया है। 'संपत्ति सब रघुपति के आही' 'सबै भूमि गोपाल की'– इस बात को प्रकट करता है कि ईश्वर ही सका मालिक है। उसने विश्व का सृजन किसी एक व्यक्ति के लिए नहीं किया, बल्कि समस्त प्राणियों के लिए किया है।'' वह सर्व–शक्तिमान[8] होते हुए भी संग्रह नही करता, रोज का काम रोज करता है। मनुष्य उसी ईश्वर का छोटा–सा रूप है, अतः उसे भी उत्पादन समाज–हित की भावना से करना चाहिए, स्वार्थ की भावना से नहीं। ईश्वर की भाँति उसे भी भविष्य के लिए संग्रह नहीं करना चाहिए। अपनी आवश्यकता की पूर्ति के बाद जो धन बच जाय, उसे अपना नहीं मानकर ट्रस्ट मानना चाहिए तथा उस सम्पत्ति का सदुपयोग समाज–हित[9] तथा रज्य–हित[10] में करना चाहिए। यदि इस प्रकार का विचार समाज में स्थापित हो जाय, तो गाँधीजी का यह दृढ़ विश्वास है कि समाज में आर्थिक विषमता मिटकर रहेगी।

गाँधीजी के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त में आर्थिक विषमता मिटाने का प्रयत्न बलपूर्वक हिंसा के आधार पर नहीं, बिल्क विचार–परिर्तन और ह्रदय–परिवर्तन के आधार पर किया जाता है। गाँधीजी की यह मान्यता है कि यदि राज्य हिंसा के आधार पर पूँजीवाद का दमन करता है, तो समाज में कभी भी हिंसा पनप नहीं सकती। यदि व्यक्ति ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त का पालन नहीं भी करता है तो राज्य की तुलन में यह कम हिंसा है।[11] अतः गाँधीजी के अनुसार ट्रस्टीशिप के विचार का प्रचार ही सामाजिक–आर्थिक विषमता को दूर कर सकता है। गाँधी यह मानते हैं कि बिना ह्रदय–परिवर्तन और विचारपरिवर्तन के कानून के द्वारा भी सच्चा समाजवाद नहीं आ सकता। अतः सबसे अधिक महत्व ट्रस्टीशिप के पत्र में जनमत तैयार करने का है। यह सम्पत्ति और व्यक्तिगत स्वामित्व के मूल पर ही प्रहार है। मुख्य वस्तु मूल्य–परिवर्तन हैं, जब संपत्ति–संग्रह का मूल्य समाप्त हो जायेगा तो फिर इसके दोष स्वयं समाप्त हो जायेगें। जबतक सत्ता प्राप्त नहीं होती है, जबतक ह्रदय–परिवर्तन का कार्य अनिवार्य रूप से सत्ता प्राप्त करने पर ऐच्छिक रूप से होना अनिवार्य है।[12]

गाँधीजी समाज को एक परिवार के रूप में देखते हैं। परिवार में हर व्यक्ति की क्षमता एक समान नहीं रहती। अतएव हर व्यक्ति एक समान उत्पदन नहीं कर सकता, परन्तु जो कुछ वह उत्पादन करता है, उसका एक ही मालिक उस परिवार का मुखिया है जो उस सम्पत्ति का उपयोग समस्त परिवार के लिए करता है। ठीक उसी प्रकार समाज में भी शक्ति की विषमता के कारण उत्पादन

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

की विषमता होगी, इसलिए व्यक्ति को अपनी शक्ति तथा मेधा के अनुकूल करोड़ो का उपर्जन करने का अधिकार है।[13] गाँधी समाज में समता लाना चाहते हैं, परन्तु ऐसी समता लाना नहीं चाहते जिसमें व्यक्ति अपनी मेधा का पूरा उपयोग ही न कर सके। गाँधी के अनुसार यदि व्यक्ति की शक्ति और मेधा को बेकाम बनानेवाली समता लायी गयी तो वह मृतवत् होगी जिसमें समाज जीवित नहीं रह सकेगा।[14] अतः गाँधीजी का यह सुझाव है कि व्यक्ति उपार्जन अपनी शक्ति और मेधा भर करे, परन्तु उसका उपयोग समाज–हित के लिए हो। उत्पादनका अधिकांश राज्य के कल्याण में खर्च हो। इसी प्रकार वितरण की समता का यह अर्थ नहीं है कि कम आवश्यकता और अधिक आवश्यकतावालों को एक समान ही मिल। पाचन–क्रिया के कमजोरवालों को और अधिक पचानेवालों को समानता के नाम पर एक समान भोजन नहीं दिया जायेगा।[15] समता का अर्थ अधिक से अधिक समता है। इसीलिए गाँधीजी निम्नतम पारिश्रमिक और उच्चतम आय को निर्धारित करना चाहते थे तथा समय–समय पर उसे बदल कर धीरे–धीरे विषमता कम करना चाहते थे।[16] गाँधीजी यह तय नहीं करना चाहते थे कि कौन व्यक्ति कितना समाज–हित में देगा, लेकिन उनका विचार था कि आवश्यकता से अधिक रखने का अधिकार उत्पादक को नहीं है।

यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है यदि व्यक्ति अपनी आवश्यकता से अधिक रख ही नहीं सकता तो वह करोड़ों की सम्पत्ति क्यों उत्पन्न करेगा? फिर जो सम्पत्ति उत्पन्न करेगा वह बिना हिंसा और शोषण के सभंव ही नहीं है। अतः ट्रस्टीशिप के बदले धन कम उत्पादन करने की ही शिक्षा क्यों न दी जाय? इस प्रश्न के उत्तर में गाँधीजी का कहना है कि वित्त की तृष्णा नहीं करना ही सर्वोत्तम है।[17] इसलिए उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में इच्छा का त्याग किया, परन्तु वे जानते थे कि ऐसा सभी नहीं कर सकते। अतः एक ओर स्वामित्व उनके हाथ में रहे, ताकि उन्हें सन्तोष हो और अधिकाधिक सम्पत्ति उत्पादन के लिए उसे प्रेरणा मिलती रहे, लेकिन इसका उपयोग से समज के लिए करें। इससे उनकी धर्म–भावना भी पुष्ट होगी तथा उनके 'स्व' को भी सन्तोष मिलेगा। अतः कुछ व्यक्ति जो पहले से धन जमा कर चुके हैं तथा धन–संग्रह करने की इच्छा का त्याग नहीं कर सकते हैं, उनके लिए ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त लागू होता है। इसके पीछे व्यावहारिक बुद्धि का बल है।

पुनः अनुभव से यह सिद्ध होता है कि बड़े–बड़े सन्त–महात्मा हुए, परन्तु पूँजीपति का ह्रदय–परिवर्तन नहीं कर सके। अतः यह कोई जारूरी नहीं है कि जमींदार या पूँजीपति स्वेच्छा से अपनी सम्पत्ति को गरीबों की सेवा में लगायें। ऐसी स्थिति में समाज की विषमता सदैव ज्यों–की–त्यों ही बनी रहेगी। गाँधीजी इस प्रश्न का भी सुन्दर उत्तर देते हुए कहते है कि 'जमींदारों और पूँजीपतियों की सत्ता श्रमिकों के सहायोग पर आश्रित है। यदि श्रमिक वर्ग उनका सहयोग करना बन्द कर दे तो वे विपुल धनराशि इकट्ठा नहीं कर सकते हैं। अतः यदि वे मजदूरों के प्रति ट्रस्टी का बर्ताव नहीं करते हैं तो श्रमिकों में अहिंसक असहयोग करने की शिक्षा दी जा सकती है और उससे बाध्य होकर उन्हें ट्रस्टी का आचरण करना पड़ेगा। दूसरी बात यदि पंचायती राज की स्थापना हो जाती है और जनमत ट्रस्टीशिप के पक्ष में होता है तो पूँजीपति जनमत का विरोध कर टिक नहीं सकते। यदि इतने पर भी व्यक्ति में ट्रस्टीशिप की भावना का विकास नहीं होत है तो राज्य को यह अधिकार होगा कि जनहित के लिए कम–से–कम बलप्रयोग और हिंसा का सहारा लेकर उनकी सम्पत्ति का अपहरण कर ले अथवा उसका कमीशन तय करे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि गाँधीजी का यह सिद्धान्त कल्पनालोक का प्रत्यय नहीं, बल्कि व्यावहारिक सिद्धन्त है, परन्तु इसकी व्यावहारिकता उत्तम संस्कृति पर आधारित है। यह ठीक है कि इसका आचरण करना कठिन है, परन्तु यदि सिद्धान्त सही है, तो इस दिशा में प्रयत्न ही उचित है। बिना किसी सफलता और विफलता का विचार किये अहिंसा का पुजारी इसका आचरण करेगा। गाँधी भी इस बात से अवगत थे कि पूर्ण ट्रस्टीशिप का पालन रेखागणित के विन्दु के समान है, जो कभी वास्तविक नहीं हो सकता, परन्तु उनका यह भी विश्वास है कि यदि इस दिशा में प्रयास किया जाय तो धीरे–धीरे प्रेम की मात्रा समाज में बढ़ने लगेगी और हमें यह विश्वास होने लगेगा कि इससे बढ़कर पृथ्वी पर समता लाने का कोई दूसरा उपाय नहीं है। गाँधीजी का यह भी विश्वास था कि चूँकि इस सिद्धान्त के पीछे धर्म और दर्शन का आधार प्राप्त है, अतः सभी सिद्धान्त समाप्त हो सकते हैं, लेकिन यह सदैव सत्य रहेगा। इसके द्वारा एक सार्वभौम जीवन–पद्धति का विकास होगा जिसमें लोग अपने पड़ोसियों के लिए चिन्ता करेंगें।

सदर्न्भ ग्रन्थ सूची

1. एम0 के0 गाँधी : ऐन ओटोवायोग्राफी और दी स्टोरी ऑफ माई ऐक्सपेरिमेंट्रस बिद टूथ, नवजीवन, अहमदाबाद, 1966, पृ0 198.
2. वही, पृ0 198.
3. हरिजन, 22 फरवरी, 1942, पृ0 49.
4. वही, 20 अप्रैल, 1940, पृ0 97.
5. हरिजन, 25 मई, 1952, पृ0 30.
6. वही।
7. वही।
8. वही 23 फरवरी, 1947, पृ0 39.
9. वही 22 फरवरी, 1942, पृ0 49.
10. यंग इंदिया, नवम्बर, 1921.
11. मॉडर्न रिव्यू, 1935.
12. प्यारेलाल : टू वाईस न्यू होराइज नवजीवन, अहमदाबाद, 1959, पृ0 90.
13. हरिजन, फरवरी 1942, पृ0 49.
14. वही।
15. वही, अप्रैल, 1940.
16. वही, 25 अक्टूबर, 1952.
17. हरिजन, 3 अगस्त, 1942, पृ0 67.

*****